|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 12: भक्तियोग

1/2 (श्लोक 1-10), शनिवार, 22 अप्रैल 2023

विवेचक: गीता विशारद डॉ. संजय जी मालपाणी

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/JHrFiXEbwuU

सगुण तथा निर्गुण भक्ति की विशेषताएं

ईश वन्दन तथा दीप प्रज्वलन के पश्चात् विवेचन सत्र का शुभारम्भ हुआ।

गुरुर्ब्रह्मा ग्रुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥

गुरु ही होते हैं जो तारणहार होते हैं और गीता भी गुरुवाणी है। गुरु को किया गया प्रणाम भगवान श्री कृष्ण के पास पहुँचता है। सारी गुरु परम्परा आदि शंकराचार्य जी से लेकर परम श्रद्धेय स्वामी गोविंददेव जी गिरि जी महाराज सहित सभी श्रेष्ठ गुरुओं के चरणों में प्रणाम करते हैं।

बारहवें अध्याय में भक्ति का महत्त्व, भक्तों के लक्षण यह सारी बातें बहुत सटीक तरीके से केवल बीस श्लोकों में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन के एक प्रश्न पर कह दी। भगवान द्वारा सम्पूर्ण भग्वद्गीता में अनेक मार्ग बतलाये गए हैं। सम्पूर्ण भगवद्गीता भी योग मार्ग है और अलग-अलग योग के मार्ग इसमें विदित किए गए हैं। हम कहाँ खड़े हैं इस पर यह निर्भर करता है कि गन्तव्य स्थान पर पहुँचने के लिए हमें कौन सी दिशा में चलना पड़ेगा। एक शिखर है, उस शिखर पर हम सबको पहुँचना है, जहाँ पर भगवान का सानिध्य प्राप्त करना है लेकिन कोई यदि शिखर के पूर्व में खड़ा है तो उसे पश्चिम दिशा की ओर चलना पड़ेगा और यदि कोई पश्चिम दिशा में खड़ा है तो उसे शिखर के पूर्व की दिशा में चलना पड़ेगा, तभी वह शिखर पर पहुँच पाएगा। अन्तिम गन्तव्य एक ही है लेकिन मार्ग भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। इसका कारण यह होता है कि हम कहाँ खड़े हैं, यह हम लोगों को जानना पड़ता है।

समझ लीजिए आपको किसी मित्र या रिश्तेदार का फोन आया और उन्होंने कहा कि आप तो गङ्गा तट पर आए हुए हैं। आप मुझे बताइए कि गङ्गा पार करने के लिए कौन-सा माञ्झी, कौन-सा नाविक सबसे अच्छा है, उसका फोन नम्बर भी दे दीजिए तो आप कहेंगे यह तो सवाल ही आधा है। आप गङ्गा के तट पर खड़े हैं, यह तो ठीक है लेकिन गङ्गा का तट बहुत लम्बा है। जब तक आप यह नहीं बताएंगे कि आप कौन से तट पर खड़े हैं, आप ऋषिकेश में खड़े हैं, हरिद्वार में खड़े हैं, गङ्गा, यमुना, सरस्वती के त्रिवेणी सङ्गम पर खड़े हैं अथवा गङ्गासागर पर खड़े हैं। कहाँ पर खड़े हैं? आप जहाँ पर खड़े हैं वहाँ से आपको नाविक का पता बताया जा सकता है लेकिन पहले आपको यह बताना पड़ेगा कि आप खड़े कहाँ पर हैं। उसी प्रकार से अनन्य प्रकार के साधक खड़े कहाँ है, उनकी प्रवृत्ति किस प्रकार की है, इस पर निर्भर करता है कि वह किस योग का अनुसरण करें। वे

ध्यानयोग के मार्ग पर चलें, कर्मयोग के मार्ग पर चलें या भक्तियोग के मार्ग पर चलें। इसलिए हम खड़े कहाँ हैं, यह जानना सर्वप्रथम आवश्यक होता है।

अर्जुन ने प्रश्न किया जो अद्‌भुत था कि सगुण साकार भक्ति करने वाले, सगुण साकार का अर्थ है एक सुन्दर भगवान का विग्रह है, भगवान की मूर्ति है, मन्दिर में बैठे हैं और उस सुन्दर विग्रह का अवलोकन करते-करते हमारे मन में भक्ति प्रस्फुटित हो रही है। उस भगवान के प्रति हमारे मन में अपार भक्ति की धारा बह रही है, इसको सगुण भक्ति कहते हैं। हमने भगवान को सगुण रूप में देखा और सगुण रूप में देखकर हमने उसकी भक्ति की। सगुण का अर्थ होता है, वह गुण जो भौतिक रूप से देखे जा सकते हैं। यदि भगवान की सुन्दर मूर्ति है तो पीताम्बर देख पाएँगे, उनके हाथ में बांसुरी दिखेगी, उनके गले में सुन्दर माला भी देख पाएँगे और उनकी कमल जैसी आँखें भी दिखेगी, उनका सुन्दर मोर मुकुट भी दिखेगा। यह सब हम लोगों को प्रत्यक्ष आँखों से दिख रहा है, सगुण भक्ति कहलाती है।

भगवान चराचर सृष्टि में व्याप्त है। वह हर व्यक्ति में तो है ही लेकिन चर और अचर दोनों ही सृष्टि में है। चल सृष्टि में सारे जानवर आ गए। हम लोगों को हर जानवर में भी उस भगवान का रूप दिखने लग जाए। गिरी-पर्वतों में दिखने लग जाए, नदी-समुद्र में दिखने लग जाए। चराचर सृष्टि में उसी का रूप है। उसका कोई एक रूप नहीं है वह तो अदृश्य शक्ति से चराचर सृष्टि में व्याप्त है। यह जो भाव है यह जिसके मन में प्रस्फुटित हुआ उसके लिए एक मूर्ति काफी नहीं रहेगी। वह तो निर्गुण निराकार में, जिस का कोई आकार नहीं बताया जा सकता, वह हर मनचाहा आकार धारण कर लेता है जैसे बहते पानी को आप छोटे से गिलास में भी इकट्ठा कर सकते हैं और बड़ी गागर में भी इकट्ठा कर सकते हैं। गागर में पानी ने गागर का आकार धारण कर लिया। छोटे बड़े पात्र का आकार धारण करना उस पानी के लिए सहज सम्भव है। पानी का कोई एक आकार नहीं बताया जा सकता उसी प्रकार- **उस परमात्मा का कोई एक आकार नहीं है वह निर्गुण है निराकार है, हमारी सोच के परे है।**

12.1

अर्जुन उवाच
एवं(म्) सततयुक्ता ये, भक्तास्त्वां(म्) पर्युपासते|
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं (न्), तेषां(ङ्) के योगवित्तमाः||1||

अर्जुन बोले - जो भक्त इस प्रकार (ग्यारवें अध्याय के पचपनवें श्लोक के अनुसार) निरन्तर आप में लगे रहकर आप (सगुण साकार) की उपासना करते हैं और जो अविनाशी निर्गुण निराकार की ही (उपासना करते हैं), उन दोनों में से उत्तम योगवेत्ता कौन हैं?

विवेचन : अर्जुन भगवान श्रीकृष्ण से प्रश्न करते हैं कि जो सतत रूप से भक्त बन कर आप की उपासना करते रहते हैं या फिर जो अव्यक्त हैं, उनकी उपासना करते हैं उनमें से कौन से भक्त सर्वश्रेष्ठ हैं, यह आप मुझे बतलाइये। भगवान ने जब यह प्रश्न सुना होगा तो स्वभाविक रूप से वह असमन्जस में चले गए होंगे।

जब यह प्रश्न किसी माँ से पूछा जाए कि मैं तुम्हारे दो बेटों में से एक बेटे को ले जाना चाहता हूँ तुम्हें कौन-सा प्रिय है, छोटा बेटा या बड़ा वाला बेटा। किसको मैं अपने साथ ले जाऊँ? माँ क्या कहेगी? माँ के लिए तो दोनों ही बच्चे प्रिय हैं। ऐसी तुलना हो ही नहीं सकती कि छोटा वाला प्रिय है या बड़ा वाला लेकिन फिर भी माँ का एक उत्तर होगा कि ले जाना चाहते हैं तो बड़े वाले को ले जाइए, छोटे वाले बेटे को न ले जाइए। उसके पीछे भाव यह नहीं है कि वह मुझे कम या ज्यादा प्रिय है। बड़ा वाला कम से कम बात तो कर सकता है, उसे भूख लगी तो वह कह सकता है, अपने पैरों पर चल सकता है, लेकिन छोटा वाला तो पूर्ण रूप से मेरे ऊपर आश्रित है। उसको गोदी में उठाकर ले जाना पड़ता है, उसको भूख लगे तो उसको समझ में नहीं आता। उसको बस रोना आता है वह रो देता है। हर काम के लिए रोता है। उसका एक ही शब्द है रोना। उसको कोई चींटी काट जाए तब भी वह रो देता है, भूख लग जाए तब भी वह रो देता है, बिस्तर गीला कर देता है तब भी वह रो देता है, वह पूरी तरह मुझ पर आश्रित है, निर्भर है यदि मैं न रहूँ तो यह जी भी नहीं पाएगा और इसलिए छोटे वाले को मेरे पास रख देना बड़े वाले को ले जाना, यदि ले जाना अनिवार्य है। माँ का यह उत्तर होगा।

इसका अर्थ यह नहीं है कि बड़ा वाला कम प्रिय है और छोटा वाला ज्यादा प्रिय, लेकिन अर्जुन ने ऐसा तिरछा सवाल पूछा है कि दोनों में से कौन-सा ज्यादा प्रिय है? बतलाइए, कौन-सा उत्तम योग दिखता है? बतलाइए, सगुण उपासना करने वाले उत्तम भक्त हैं या निर्गुण की उपासना करने वाले उत्तम भक्त हैं?

12.2

श्रीभगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां(न्), नित्ययुक्ता उपासते|
श्रद्धया परयोपेता:(स्), ते मे युक्ततमा मताः||2||

श्रीभगवान् बोले - मुझ में मन को लगाकर नित्य-निरन्तर मुझ में लगे हुए जो भक्त परम श्रद्धा से युक्त होकर मेरी (सगुण साकार की) उपासना करते हैं, वे मेरे मत में सर्वश्रेष्ठ योगी हैं।

विवेचन : भगवान ने अर्जुन को कहा कि मैं अपने सभी भक्तों को उतना ही प्रेम करता हूँ और केवल भक्तों को ही नहीं अपने सभी मानने वालों को या न मानने वालों को भी। सब पर उनका असीम प्रेम है। इसलिए भगवान की उपासना कभी डर से मत करना, प्रेम से करना क्योंकि भगवान आपको बहुत प्रेम करते हैं। आप कितना प्रेम भगवान को लौटाते हैं इस पर निर्भर करता है कि वह आपकी तरफ कितना देखें।

भगवान ने कहा कि मेरे अन्दर अपने मन का निवेश करो। क्या जबरदस्त निवेश है, यदि भगवान के अन्दर अपने मन का निवेश कर दें तो सबसे ज्यादा प्रतिफल मिलेगा। भगवान कैसे हैं जो मेरी प्रतिदिन, प्रतिपल, प्रतिक्षण नित्य उपासना करते हैं। जो मुझ से श्रद्धा के साथ जुड़ जाते हैं, वह सबसे ज्यादा युक्त हैं। युक्त का अर्थ श्रेष्ठतम। श्रेष्ठ वही है जो मेरी नित्य उपासना करते हैं, जो मेरी सगुण साकार की उपासना करते हैं लेकिन फिर बाद में भगवान यह भी कहते हैं कि वे लोग भी हैं जो सगुण साकार की उपासना नहीं करते हैं, निर्गुण निराकार की उपासना करते हैं वह भी मुझमें ही आकर मिलते हैं।

12.3, 12.4

ये त्वक्षरमनिर्देश्यम्, अव्यक्तं(म्) पर्युपासते|
सर्वत्रगमचिन्त्यं(ञ्) च, कूटस्थमचलं(न्) ध्रुवम्||3||
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं(म्), सर्वत्र समबुद्धयः|
ते प्राप्नुवन्ति मामेव, सर्वभूतहिते रताः||4||

और जो (अपने) इन्द्रिय समूह को वश में करके चिन्तन में न आने वाले, सब जगह परिपूर्ण, देखने में न आने वाले, निर्विकार, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की तत्परता से उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में प्रीति रखन् वाले (और) सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।
जो अपनी इन्द्रियों को वश में करके अचिन्त्य, सब जगह परिपूर्ण, अनिर्देश्य, कूटस्थ, अचल, ध्रुव, अक्षर और अव्यक्त की उपासना करते हैं, वे प्राणिमात्र के हित में रत और सब जगह समबुद्धि वाले मनुष्य मुझे ही प्राप्त होते हैं।

विवेचन : श्रीभगवान कहते हैं कि जो निर्गुण की उपासना करते हैं,

यहाँ पर निर्गुण का अर्थ गुण का विलोम है,
जिस प्रकार से व्यक्त का अर्थ अव्यक्त का विलोम है।
व्यक्त का अर्थ सगुण अर्थात् जो सगुण नहीं है वह निर्गुण।
निराकार जिसका कोई आकार नहीं है।
सारे ही शब्द जो निर्गुण, निराकार के लिए उपयोग में लाए गए वह समस्त विलोम शब्द हैं।
सगुण साकार का विलोम निर्गुण, निराकार।

निराकार को भी यदि समझना है तो आकार का ही सहारा लेना पड़ता है। इस बात का ध्यान रखना होगा कि बिना आकार का सहारा लिए निर्गुण की व्याख्या नहीं हो सकती, इसीलिए भगवान यहाँ कह रहे हैं कि जो व्यक्त नहीं हो सकता उसकी जो उपासना करते हैं और सभी में जो मेरा रूप देखते हैं। अचिंत्य का अर्थ है मन बुद्धि से परे, जो चल नहीं है अर्थात् स्थित है जो व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसे जो लोग हैं जिन्होंने अपनी इन्द्रियों के नाम अर्थात् हमारा शरीर, हमारे शरीर में कई इंद्रियाँ हैं, कुछ ज्ञानेंद्रियाँ हैं कुछ कर्मेंद्रियाँ हैं, जैसे- हमारी आँखें, कान, नासिका, हमारा मुँह, हमारी त्वचा यह सारी हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। हमारे हाथ, हमारे पैर यह समस्त हमारी कर्मेंद्रियाँ हैं और इन सभी इन्द्रियों के ग्राम पर अर्थात हमारे शरीर की सभी इन्द्रियों पर जो अपने आप से नियन्त्रण कर लेता है, समस्त इन्द्रियों को जो नियन्त्रण में रखता है, जो उनका नियमन करता है जो सभी को सम बुद्धि से देखता है, यह नहीं देखता कि वह काला है तो उससे प्रेम क्यों करें, वह गोरा है तो उसे प्रेम करें। उसके मन में काले और गोरे का भेद नहीं आता। उसके मन में मनुष्य और जानवर का भी भेद नहीं आता है कि यदि कुत्ता है तो इससे कैसा भी बर्ताव किया जा सकता है, यदि आदमी है तो इससे अच्छा बर्ताव करना होगा। ऐसा भाव उसके मन में नहीं आता तो उसकी सभी के प्रति बुद्धि सम हो गई। यह सब मुझे ही प्राप्त हो जाते हैं अर्थात् ऐसे लोग जिनकी बुद्धि सम है जिन्होंने अपनी इन्द्रियों के ऊपर निग्रह किया हुआ है और जो चारों तरफ मुझे ही देखते हैं, ऐसे सारे लोग मुझे ही प्राप्त होते हैं। सारे भूतों के हित में जो लगे हुए हैं, जब सब में भगवान दिख जाए तो गाय में भी भगवान दिखता है। चींटी में भी भगवान दिखता है। हमारी छत पर आने वाले कौए में भी भगवान दिखता है, समस्त चराचर सृष्टि में भगवान दिखता है।

इसीलिए तो हमारी भारतीय संस्कृति में जब धान होता है तो उसका गेहूँ निकाल दिया जाता है, बचा हुआ गायों, भेड़, बकरियों के लिए भेज दिया जाता है। जब गेहूँ पीसा जाता है तो उसका आटा बन जाता है। जो सूखा आटा है उसे चींटियों के लिए थोड़ा सा देना होता है, उस आटे को मथना पड़ता है। जब आटा मथ लिया तो उसकी छोटी-छोटी गोलियाँ बनाकर मछलियों को खिलाई जाती है। जलचरों को भी सम भाव से देखा जाता है। जब रोटी सेंक दी गई तो पहले भगवान के लिए भोग निकाला जाए, पहली रोटी याचक को दी जाए, दूसरी रोटी गाय को दी गई और अन्तिम रोटी कुत्ते के लिए रखी गई। देखिए इस सारी चराचर सृष्टि के लिए समता का भाव हमारे मन में प्रकट हो इसलिए हमारे ऋषि-मुनियों ने हमारी इस भारतीय संस्कृति में इतने सुन्दर-सुन्दर प्रयोजन किए हैं कि हम रोज तुलसी की पूजा करें और पौधे में भी हम भगवान का रूप देखें। वर्ष में कम से कम एक बार वट सावित्री के दिन वटवृक्ष की भी पूजा करें और भी अन्य वृक्षों की पूजा बताई गई है। आँवला तथा पीपल के पेड़ की भी पूजा की जाती है। अन्यान्य वृक्षों की पूजा करना सिखाया गया है।

भगवान को एक-एक फूल अर्पित कर दिया गया हैं। लाल रङ्ग के जो फूल है, वह गणेश जी को चढ़ाना। गणेश जी हमारे घर में हैं तो लाल रङ्ग के फूल घर में रखने पड़ेंगे। सफेद रङ्ग के फूल भगवान शिव को प्रिय हैं तो सफेद रङ्ग के भी फूल भी लगाने पड़ेंगे। बिल्वपत्र भी लगाना पड़ेगा। हनुमान जी को रुई के पत्ते पसन्द हैं तो रुई का भी पेड़ रखना पड़ेगा। देखिए वृक्षों में भी, चराचर सृष्टि में हम लोगों को भगवान को देखना बताया गया है।

हम गोवर्धन पूजा भी करते हैं अर्थात् पर्वतों की पूजा, हम नदियों की पूजा भी करते हैं। छठ पूजा के दिन हर व्यक्ति जिसके जिले में जो नदी होती है उसकी पूजा करते हैं। सागर की पूजा रक्षाबन्धन के दिन करना सिखाया गया हैं। चन्द्रमा को हम चन्दा मामा कहते हैं और पुत्री को हम पुत्री माता कहते हैं, सम्बन्ध प्रस्तावित कर दिया गया है। चराचर सृष्टि में उसको देखने का इससे सुन्दर तरीका नहीं हो सकता। भगवान कहते हैं कि सारे भूत मात्रों के हित में लगे हुए इस प्रकार के जो सम बुद्धि या इन्द्रिय निग्रह करने वाले लोग हैं वह भी मुझमें ही आकर मिलते हैं। भगवान की इस बात को हमें ध्यान से समझना पड़ेगा कि जो निराकार की भक्ति करते हैं और ऐसा कहकर जो मन्दिरों में नहीं जाते उन लोगों को यह सारे काम करने पड़ेंगे, सभी में भगवान का रूप देखना पड़ेगा। यह ज्यादा मुश्किल कार्य है। भगवान स्वयं ही आगे कहते हैं। यह तो कठिन मार्ग है। यह इतना आसान मार्ग नहीं कि हम निर्गुण निराकार की भक्ति करें।

12.5, 12.6

क्लेशोऽधिकतरस्तेषाम्, अव्यक्तासक्तचेतसाम्|
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं(न्), देहवद्भिरवाप्यते||5||

ये तु सर्वाणि कर्माणि, मयि सन्न्यस्य मत्पराः|
अनन्येनैव योगेन, मां(न्) ध्यायन्त उपासते||6||

अव्यक्त में आसक्त चित्त वाले उन साधकों को (अपने साधन में) कष्ट अधिक होता है; क्योंकि देहाभिमानियों के द्वारा अव्यक्त-विषयक गति कठिनता से प्राप्त की जाती है।
परन्तु जो कर्मों को मेरे अर्पण करके (और) मेरे परायण होकर अनन्य योग (सम्बन्ध) से मेरा ही ध्यान करते हुए (मेरी) उपासना करते हैं।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि अव्यक्त में आसक्त चित्त वाले, (अव्यक्त में जो अपना चित्त लगा देते हैं) निराकार की भक्ति करने वाले उन सभी साधकों के बारे में मैं बता रहा हूँ कि वे साधक जो अव्यक्त की उपासना करते हैं उनके लिए कष्ट थोड़े ज्यादा हैं। वास्तविकता यह है कि भगवान का रूप जब मेरे सामने आया तो मैंने हाथ जोड़ लिए, मैंने भगवान को देख लिया काम समाप्त।

यहाँ तो घर के बाहर पैर रखा, कुत्ता दिखा तो यहाँ उसको भी प्रणाम करना पड़ेगा। गाय दिखेगी तो उसको भी प्रणाम करना पड़ेगा क्योंकि सभी में भगवान है, चराचर सृष्टि में है। किसी को साइकिल दिखे, मोटरसाइकिल दिखे तो वह भी अचर हैं उसको भी प्रणाम करना पड़ेगा। साल में एक बार तो उनके ऊपर स्वास्तिक बनाना पड़ेगा। दशहरे के दिन हमारे समस्त आयुधों की पूजा करने को कहा गया है। उस दिन हम अपनी गाड़ियों पर भी स्वास्तिक निकालते हैं क्योंकि उस गाड़ी में भी भगवान है। चराचर सृष्टि में देखना कोई आसान कार्य नहीं होता वहाँ पर बहुत ज्यादा कष्ट हैं क्योंकि देहाभिमानियों द्वारा अव्यक्त विषयक जो निर्गुण निराकार है उनके विषय में गति कठिनता से प्राप्त होती है। बड़ी मुश्किल से उन्हें अव्यक्त मैं अपनी गति लगानी होती है। भगवान ने स्वयं ही यहाँ पर कह दिया है कि इस मार्ग में बड़े दुःख हैं इसलिए यह काम थोड़ा मुश्किल है। सगुण भक्ति करने वालों को तो मैं बड़े आराम से मृत्यु संसार के सागर से पार लगा देता हूँ। मृत्यु संसार का सागर क्या है? इस जीवन मैं विश्व यह मृत्यु संसार का सागर है। हम मृत्यु लोक में पैदा हुए हैं।

मानव जीवन में जब आते हैं तो यह मृत्यु लोक कहलाता है और मृत्यु लोक में रहना थोड़ा-सा कठिन काम है। यहाँ पर जो भक्ति करने लग जाए, मेरे ऊपर भरोसा करने लग जाए तो छोटे बालकों की भाँति (छोटा बालक अपनी माँ को ही सर्वस्व मान लेता है) जो कुछ है वह माँ है, यदि माँ छोड़ देती है तो वह माँ को देखता रहता है। एक क्षण भी माँ को ओझल नहीं होने देता। एक क्षण भी बच्चा माँ को ओझल देखता है तो समझो बच्चा सो गया है और माँ अपने काम में लग जाती हैं और बच्चा जग गया, आस-पास में माँ नहीं दिखती हैं तो उसे तुरन्त माँ की याद आती है कि माँ कहाँ चली गई। वह रोने लग जाता है। माँ दौड़ कर आती है और उसे अपनी गोदी में उठा लेती है।

जो सगुण की भक्ति करने वाले लोग हैं वह बिल्कुल बालक की तरह होते हैं। इस प्रकार के लोग जो भगवान को एक क्षण भी विस्मरण नहीं होने देते। थोड़ा सा भी विस्मरण हो जाए तो इनकी आँखों में आँसू आ जाते हैं कि मैं भगवान को भूल गया और भगवान कहाँ चले गए। मेरे ऐसे जो अनन्य भाव से भक्ति करने वाले लोग हैं, उनके बारे में भगवान कहते हैं कि जो सम्पूर्ण कर्मों के द्वारा मुझ में लीन हो जाते हैं, मेरे बिना उनको कुछ सूझता नहीं है। ऐसे जो अनन्य योग से मेरा ध्यान करते हुए मेरी उपासना करते हैं, उनको मैं मृत्यु संसार के सागर से पार करा देता हूँ।

12.7

तेषामहं(म्) समुद्धर्ता, मृत्युसंसारसागरात्|
भवामि नचिरात्पार्थ, मय्यावेशितचेतसाम्||7||

हे पार्थ ! मुझ में आविष्ट चित्त वाले उन भक्तों का मैं मृत्युरूप संसार-समुद्र से शीघ्र ही उद्धार करने वाला बन जाता हूँ।

विवेचन : भगवान कहते हैं यदि आपको गङ्गा पार करनी है, समुद्र में कहीं जाना है तो हम किसी नाव में बैठते हैं और हमें उस नाविक पर पूरा भरोसा होता है कि वह हमें ठीक से ले जाएगा। न तो हमें तैरना आता है और न ही हमें नाव को चलाना आता है। ऐसी परिस्थिति में मात्र एक ही मार्ग बचता है कि हम नाविक पर भरोसा करें, उसकी नाव पर बैठ जाएँ। यह जो सगुण

भक्ति करने वाले लोग अज्ञानी भक्त हैं उनको सिर्फ यही पता है कि भगवान उनको मृत्यु संसार के सागर से पार ले जाएँगे।

केवट एक ऐसा नाविक था। जब भगवान श्री राम उसकी नाव में बैठने के लिए गङ्गा के तट पर आ पहुँचे तो केवट ने हाथ जोड़ दिए कि हे भगवान! आप आए तो हैं लेकिन मुझे बड़ा डर लगता है। मैंने सुना है कि आपके पैरों की धूल गौतम ऋषि के आश्रम में चली गई और वहाँ पर जो अहिल्या थी उसको आपने स्पर्श मात्र कर दिया। उस पत्थर की अहिल्या की स्त्री बन गई है यह मैंने सुना है। आप महर्षि विश्वामित्र के साथ गौतम ऋषि के आश्रम में गए थे तब उस पत्थर में से अहिल्या को निकाल दिया था, यह कहानी मैंने सुनी है।

केवट भोला-भाला है। उसको क्या पता कि अहिल्या की क्या स्थिति थी, अहिल्या के ऊपर आरोप हो गया था। इन्द्र ने अहिल्या को फँसाया था और इसलिए गौतम ऋषि अहिल्या पर नाराज होकर निकल गए थे। तब से लेकर अहिल्या हताश थी, अवसाद में थी, एक जगह बैठी थी, न खाने की सुध थी, न नहाने की सुध थी। एक तरीके का तप कर रही थी और विश्वामित्र ऋषि जब राम और लक्ष्मण को लेकर वहाँ पहुँचे तो भगवान श्रीराम ने कहा, क्या मैं इससे कुछ बात कर सकता हूँ? भगवान राम ने स्वयं अहिल्या को प्रणाम किया है और अहिल्या को कहा कि आप तो साध्वी हैं, आप तपस्विनी हैं। जब साध्वी और तपस्विनी कह दिया तो अहिल्या ने आँख खोलकर देखा। कौन मुझे साध्वी और तपस्विनी कह रहा है। मैं तो उपेक्षित जीवन जीने वाली अभागी हूँ। मुझे साध्वी कहकर कौन पुकार रहा है, कौन तपस्वी कह कर पुकार रहा है। उसने आँखे खोलकर देखा कि स्वयं भगवान श्रीराम खड़े हैं। आँखों से आंसू बहने लगे। भगवान ने उपदेश दिया।

समुपदेशन किया। समुपदेशन सुन्दर शब्द है, उपदेश को भी अलग तरीके से हृदय में जाकर करना, अपना समझ कर करना इसको कहते हैं समुपदेशन। इसके बाद अहिल्या की स्मृति फिर जगी. फिर उस जगह गौतम ऋषि उसी समय लौटकर आए और भगवान श्रीराम ने अहिल्या का उद्धार कर दिया। यह केवट को पता ही नहीं था। केवट को सिर्फ इतना ही ज्ञात था कि केवल स्पर्श किया और अहिल्या जग गई। कौन समझाए केवट को। केवट ने कहा कि क्षमा करें आप मेरी नाव में आकर बैठ जाएँगे और आपके पैरों की धूल आकर मेरी नाव को लग जायेगी तो सब गड़बड़ हो जाएगी। उस नाव की भी महिला बन जाएगी। एक महिला मेरी पत्नी मेरे घर में हैं उसको सँभालते-सँभालते मेरी मुश्किल है और दूसरी महिला को मैं कैसे सम्भालूँगा। और जो मेरी नाव है वही आजीविका का साधन है यदि यह नाव महिला बन गई तब तो मेरा क्या होगा। हे भगवान! मेरी प्रार्थना स्वीकार कर लीजिए। पहले मैं आपके अच्छे से पैर धोऊँगा। आपके पैर पर इतनी सी भी धूल नहीं रहनी चाहिए, आप मुझे अनुमति दे दें।

जिन भगवान राम ने राजा जनक तक को मना कर दिया था कि वर पूजा में पैर नहीं धोने हैं। लक्ष्मणजी को भी यह सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ और न ही सीता जी को यह भाग्य प्राप्त हुआ जो आज केवट को यह भाग्य प्राप्त हो रहा है। बाद में यह भाग्य शबरी को भी प्राप्त हुआ है। उसने अपने आँसुओं से भगवान के चरण धोये। केवट ने खूब रगड़-रगड़कर भगवान के चरण कमलों को नदी से गागर में पानी लाकर पैर धोए। लक्ष्मण जी देखते रह गए कि केवट का भाग्य भी कितना बड़ा है कि भगवान के चरण प्रक्षालन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है। सीता माता जी देखती ही रह गईं कि जो भाग्य मुझे प्राप्त नहीं हुआ यह केवट को प्राप्त हुआ हैं। भगवान श्री राम लक्ष्मण जी और सीता जी उस नाव में बैठे। केवट कहने लगा पार करने का तो काम इसी के नाम से हो सकता है, ऐसे पार करना तो इतना आसान नहीं है और गङ्गा माता तो उछल-उछल के भगवान श्री राम के चरणों को स्पर्श करने हेतु नाव के अन्दर आना चाहती थी। केवट गङ्गा मैया को प्रार्थना करता है कि हे गङ्गा माता! उछलना मत आज तो भगवान को इस पार से उस पार लगाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। शान्त हो जाएं बस नाव मुझे खे लेने दे। इनको पार तो करा दूँ। गङ्गा पार करने के बाद श्री राम, लक्ष्मण जी और सीता जी नीचे उतर गए और राम देखने लग गए कि इस नाविक को पारिश्रमिक तो देना चाहिए, उसने गङ्गा पार कराई है। भगवान के पास कुछ नहीं था वह सब छोड़ कर आए थे लेकिन सीता मैया के पास उनकी अपनी मुद्रिका थी तो उन्होंने भगवान के भाव को समझ कर कि भगवान क्या सोच रहे हैं, और भगवान कुछ देना चाह रहे हैं। उन्होंने अंगूठी निकालकर भगवान के हाथ में रख दी और कहा भगवन इसको दे दीजिए। भगवान ने केवट को मुद्रिका देना चाहा तो केवट ने कहा भगवान यह क्या कर रहे हैं, यह मुझसे नहीं होगा। यह तो परम सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि आपको मैंने पार लगाया लेकिन आपका और मेरा दोनों का काम एक ही तो है। मैं अपनी नौका से लोगों को गङ्गा पार कराता हूँ, आप भवसागर को पार कराने वाले नाविक हैं। आज मैं आपसे कुछ ले लूँ तो भूल हो जाएगी। बस आपसे एक बात चाहूँगा कि जब मैं आऊँगा तो मुझे भी इस भवसागर से पार करा देना। केवट का भाव देखिए कितना भरोसा है भगवान पर और भगवान से कह रहा है कि आज मैंने पार करा दिया जब मेरा अन्त समय आएगा तो मुझे पार करा देना भवसागर से।

इतना सुन्दर भाव है। केवट कुछ नहीं जानता, न भक्ति जानता है और न ही कुछ जानता है। बस भरोसा जानता है, श्रद्धा जानता है।

यदि श्रद्धा के साथ में **नित्य युक्ता उपासते** नहीं हैं तो श्रद्धा के साथ में नित्ययुक्त होकर उपासना करनी पड़ेगी और यदि श्रद्धा आ गई तो अपने आप ही सब घट जाएगा। भगवान ने कहा कि मैं तो ऐसे ही सब लोगों को मृत्यु संसार से मुक्त करा देता हूँ। यदि श्रद्धा आ गई तो अपने आप ही सब घट जाएगा। मुझमे आवेशित चित्त वाले जिन्होंने अपना चित्त अर्थात अपना हृदय, अपना मन मेरे अन्दर आवेशित किया है (आवेशित का अर्थ है मुझ में उस चित्त को लगाने वाला) उन सभी को संसार सागर से मुक्त कर देता हूँ।

12.8

मय्येव मन आधत्स्व, मयि बुद्धिं(न्) निवेशय|
निवसिष्यसि मय्येव, अत ऊर्ध्वं(न्) न संशयः||8||

(तू) मुझ में मन को स्थापन कर (और) मुझ में ही बुद्धि को प्रविष्ट कर; इसके बाद (तू) मुझ में ही निवास करेगा (इसमें) संशय नहीं है।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि केवल मन के आवेश और निवेश से कुछ नहीं होगा, बुद्धि का भी निवेश करना होगा। जो मेरे अन्दर मन और बुद्धि दोनों को निवेश करेगा, निःसन्देह इस लोक में भी और परलोक में भी उसकी प्रगति होगी। इसमें कोई सन्देह नहीं है लेकिन गड़बड़ यह है कि मन तो मान जाता है लेकिन बुद्धि बड़े सवाल खड़े करती है कि क्या ऐसा होगा, क्या भगवान वास्तव में हैं, क्या वह मेरा उद्धार करेंगे। बुद्धि बड़े सवाल खड़े करती है क्योंकि बुद्धि हमें प्रकृति के द्वारा प्राप्त है। मानव बुद्धि, अहङ्कार और पञ्चमहाभूत, सारा शरीर, हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेंद्रियाँ यह सब प्रकृति से प्राप्त हुई हैं। प्रकृति और परमात्मा जब दोनों का मिलन हो जाता है तो शरीर बनता है। परमात्मा कहाँ है, कैसे आता है? यह पन्द्रहवें अध्याय में सीखेंगे, इसलिए लगे रहना है। लेकिन प्रकृति से प्राप्त यह तेरह चीजें- पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेंद्रियाँ, पञ्चमहाभूत से यह सब कुछ बनें और मन, बुद्धि, अहङ्कार यह भी हमें प्रकृति से प्राप्त हुए हैं। यह बुद्धि हमें प्रकृति से प्राप्त होती है और यह सवाल करती है कि क्या यह है, क्या ऐसा होगा?

इसी से जुड़ी एक बड़ी सुन्दर कहानी है। एक सन्त थे, इनका नाम शरणानन्द जी महाराज था। वह जन्म से ही प्रज्ञा चक्षु थे, उनको अलौकिक दृष्टि प्राप्त थी। आँखे नहीं थी, अन्धे थे लेकिन अलौकिक दृष्टि थी। रोज आश्रम से शाम को टहलने के लिए निकलते थे। एक दिन शाम को निकले, साथ में भक्त भी चल दिए। चलते-चलते एक पेड़ के नीचे जाकर बैठ गए॥ उनकी मर्जी थी, कहीं भी बैठ जाते थे। वहाँ पर पड़ा एक पत्थर महाराज जी ने उठा लिया। उस पत्थर पर बहुत समय तक हाथ घुमाते रहे। वह पत्थर पर बहुत प्यार से हाथ घुमा रहे थे और अन्त में उठते-उठते उस पत्थर पर नजर डालकर देख रहे थे, जैसे उस पत्थर से बात कर रहे हैं। उन्होंने पत्थर से कहा कि कल दोबारा से आऊँगा मेरी प्रतीक्षा करना। भक्तों को मालूम था कि महाराज जी ऐसी बहकी-बहकी बातें कभी-कभी करते हैं लेकिन महाराज जी तो पहुँचे हुए सन्त थे। अगले दिन फिर टहलने निकल पड़े सभी भक्त भी उनके साथ-साथ चल पड़े और उसी पेड़ के नीचे आकर बैठे। उसी पत्थर को उठाया। कल कईयों ने उस पत्थर को ठीक से देखा भी था। एक तरफ से थोड़ा सा सफेद और बाकी काला था। वह पत्थर ध्यान में आ रहा था कि यह कल वाला ही है और उस पत्थर को देखकर कहने लगे कि मैंने कहा था न कि मैं कल आऊँगा देख मैं आ गया। एक भक्त जो साथ में आया था वह मन से तो समर्पित था किन्तु उसकी बुद्धि ने प्रश्न खड़ा कर दिया कि ऐसा कैसे हो सकता है। स्वामी जी कितने कदम चले यह गिनते होंगे क्योंकि उसी पेड़ के नीचे आकर रुके हैं। वह गिनते होंगे कि कदम कितने चले हैं और इसमें कदम चलने के बाद बाएं मोड़ पर वह पेड़ आता है तो वहाँ आकर बैठ गए और फिर वहीं पर वह पत्थर था तो स्वाभाविक रूप से वही पत्थर उठा लिया होगा। स्पर्श से तो याद आ ही जाता है कि यह वही पत्थर है। महाराज जी उस पत्थर को सहला रहे थे, उसके ऊपर हाथ घुमा रहे थे और उठते-उठते महाराज जी ने उस पत्थर से कहा कि कल दोबारा मिलने आऊँगा, प्रतीक्षा करना। अब भक्त की बुद्धि में जो भेद आया था उसने सोचा कि, मैं एक काम करता हूँ इस पत्थर को उठा लेता हूँ और इस पत्थर को कहीं और डाल देता हूँ। कल देखते हैं क्या होता है, आज तो हो सकता है कदम गिन कर आए और बैठ गए और वहीं पर वह पत्थर था। सब लोग उठ कर महाराज जी के साथ चलने लगे। वह भक्त थोड़ा पीछे रह गया उसने वह पत्थर उठाया

और थोड़ा आगे जाकर दाहिनी दिशा में डाल दिया।

अगले दिन वह इन्तजार कर रहा था कि मैं तो आज शाम को स्वामी जी के साथ टहलने जाऊँगा। स्वामी जी ने कहा चलो टहलने निकले। सब लोग चल पड़े। यह सबसे आगे चल रहा था क्योंकि आज परीक्षा करनी थी कि आज यह घटना घटती है या नहीं घटती है। महाराज जी चल पड़े। तीव्र गति से चलते जा रहे थे और चलते-चलते तीव्र गति से उसी पेड़ के पास आकर रुक गए और वहाँ आकर महाराज जी दाहिनी और घूम गए। अब भक्त घबड़ाया। महाराज जी उसी पत्थर के पास गए। वहाँ पर बैठे उसी पत्थर को उठाया और कहने लगे तू यहाँ कैसे आ गया। लेकिन मैंने कहा था ना कि मैं आऊँगा तो मैं आया। जब यह बात उस भक्त ने सुनी तो साष्टांग दण्डवत कर दिया और महाराज जी से कहा, मुझे क्षमा करें। मैंने सन्देह किया है, मेरी बुद्धि ने सन्देह किया है, लेकिन मैं एक बात समझ नहीं पा रहा हूँ। आप देख नहीं सकते फिर भी उस पत्थर को कैसे उठा लेते हैं, कृपा करके बताएँ? स्वामी जी महाराज हंस पड़े और महाराज जी ने कहा बेटा बात यह है कि हर पत्थर में भी वह ऊर्जा होती है और वह ऊर्जा जगानी पड़ती् है। उस पत्थर को सहला कर मैंने ऊर्जा को जगाया तभी उस पत्थर ने मुझे अपनी और आकर्षित किया। वह आकर्षण मैंने पैदा किया अपने भावों से।

यदि पत्थर में आकर्षण पैदा किया जा सकता है तो वह मूर्तियाँ जो युगों- युगों से अपने भक्तों का आकर्षण बनी हुई है और भक्त आकर श्रद्धा के साथ अपना माथा टेकते हैं। उन सारी मूर्तियों में कितनी उर्जा भरी होगी। पंढरपुर में प्रति वर्ष लाखों लोग जा कर विट्ठलनाथ जी को माथा टेकते हैं। वे पैदल पैदल जाते हैं। बिट्ठल - बिट्ठल करते जाते हैं और जब वहाँ जाकर माथा टेकते हैं तो अपार आनन्द के साथ भर जाते हैं। वे सभी भक्त ज्यादा पढ़े-लिखे नहीं होते हैं किन्तु उनका मन और बुद्धि दोनों अर्पित होती है, यह शर्त है। यदि यह शर्त पूर्ण होगी तभी बात बनेगी फिर चाहे श्रवण हो या कीर्तन हो, अर्चन हो या वन्दन हो। यह सारे जो भक्ति के अन्यान्य मार्ग हैं यह जग जाने चाहिए। बाह्य से अन्दर की यात्रा आरम्भ हो जाए, बुद्धि के साथ मन के साथ। हमारी सारी इन्द्रियाँ केवल बाहर लगी हुई है। बाहर देख रहे हैं, बाहर का सुन रहे हैं, अन्दर की आत्मा को सुनने का समय नहीं है। बाहर देख रहे हैं, अन्दर की ओर झाँकने का समय नहीं है। बाहर की सोच रहे हैं, अन्दर की सोचने का समय नहीं है। हमारी धारा बाहर की ओर प्रभावित है और जब यह धारा उल्टी हो जाएगी। हम अन्दर झाँकना आरम्भ कर देंगे तो धारा शब्द भी उल्टा हो जाएगा। वह राधा बन जाता है। वे अन्दर की ओर झाँक लेते हैं। अन्दर के मन में, बुद्धि में भगवान को प्रतिष्ठित कर लेते हैं। हम अनन्य भाव से प्रतिदिन, प्रतिपल यही काम करने लग जाते हैं। लेकिन भगवान कह रहे हैं, हर कोई यह काम कर पाएगा यह मुश्किल है। कोई बात नहीं यह मुश्किल है तो आसान बात बताता हूँ।

12.9

अथ चित्तं(म्) समाधातुं(न्), न शक्नोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो, मामिच्छाप्तुं(न्) धनञ्जय।।9।।

अगर (तू) मन को मुझ में अचल भाव से स्थिर (अर्पण) करने में अपने को समर्थ नहीं मानता, तो हे धनञ्जय ! अभ्यास योग के द्वारा (तू) मेरी प्राप्ति की इच्छा कर।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि दिन-रात मेरे ही विचार को अपने अन्दर स्थिर करके रखना और यदि यह सम्भव नहीं है तो मेरे अन्दर तेरा मन और तेरी बुद्धि स्थिर रहे। एक काम करना चाहिए कि इसका अभ्यास आरम्भ करो।

इसीलिए तो स्वामी जी महाराज कहते हैं कि, गीता पढ़ें, पढ़ाएँ, जीवन में लाएँ। हम यह विवेचन क्यों कहते- सुनते हैं ? क्योंकि यह कहते-सुनते हम थोड़ा जानने लग जाएँ। हमारे कान में यह बात उतरेगी तो मन में भी यह बात उतरेगी। अभ्यास होगा, थोड़ा अभ्यास करना आरम्भ कर लेंगे।

भगवान कह रहे हैं कि अभ्यास करना पड़ेगा। जैसे- पाँच दस बार अलार्म बजा कर रख लेना, भूल जाएँगे तो फिर याद आ जाएगा। जब उठें तो प्रणाम कर लेना, सोते समय भी प्रणाम करके सोना, भोजन करते समय भी हाथ जोड़ लेना, उठते बैठते किसी को भी मिले तो राम-राम कह देना और किसी से विदा हो तब भी राम-राम कह देना, कितनी सुन्दर परम्पराएँ हम लोगों ने तैयार की। जब घर में कोई नन्हा सा बालक पैदा हो जाता है तब भी भगवान को स्मरण किया जाता है और जब कोई विदा हो

जाता है, उसकी मृत्यु हो जाती है तो उसे राम नाम सत्य है, कह कर विदा किया जाता है। हर क्षण हर पल वह नाम हृदय में बसा रहे।

यह भाव पुष्ट करने के लिए हमारे ऋषि-मुनियों ने यह परम्पराएँ हम लोगों को बताई हैं। भगवान कहते हैं तू मुझे प्राप्त कर लेगा, बस तुझे इसका अभ्यास करना पड़ेगा लेकिन भोले वाले भक्त अभ्यास करने में भी तो असमर्थ होते हैं। ऐसे लोगों के लिए भगवान ने और सरलीकरण किया और आसान कर दिया।

12.10

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि, मत्कर्मपरमो भव|
मदर्थमपि कर्माणि, कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि||10||

(अगर तू) अभ्यास (योग) में भी (अपने को) असमर्थ (पाता) है, (तो) मेरे लिये कर्म करने के परायण हो जा। मेरे लिये कर्मों को करता हुआ भी (तू) सिद्धि को प्राप्त हो जायगा।

विवेचन : भगवान कहते हैं कि अभ्यास करने में भी यदि तू असमर्थ हैं तो तू जो भी काम करेगा तो वह मेरे लिए ही करना। सारे काम मेरे लिए करना आरम्भ कर दे। तेरे सारे कार्य उठते, बैठते, सोते, जागते, जो भी तू करेगा मेरे लिए करना प्रारम्भ कर दें तो तुझे यह सिद्धि प्राप्त हो जाएगी।

तू जो भी कुछ कर रहा है काम बदलने की भी आवश्यकता नहीं। यदि तू गृहिणी है तो रसोई भी करते रहना कोई चिन्ता नहीं लेकिन रसोई करना तो मेरे लिए मन में यह भाव रखना कि मैं तो प्रसाद बना रही हूँ, भगवान को भोग दिखाऊँगी, घर की सफाई कर रही है तो मेरे लिए कर। घर साफ कर रही है ताकि भगवान का अधिष्ठान हो जाए। भगवान यहाँ आकर बैठ जाएं। जो शिक्षक हैं पढ़ाने का काम करते रहना लेकिन अपने जो छात्र हैं उन्हीं में भगवान को देखना और सोचना कि यही बाल लला आए हैं। मैं यहाँ उन बाल ललाओं को ही पढ़ा रहा हूँ। यह भाव रख कर उन बच्चों को पढ़ा देना, फिर उन बच्चों की तरफ कभी हाथ नहीं उठेगा और तू कभी उनका अपमान नहीं करेगा क्योंकि भगवान का रूप देख रहा है।

तू ही सर्वत्र व्याप्त हरि, तुझ में यह सारा संसार,
इसी भावना से अन्तर भर, मिलूँ सभी से तुझे निहार।
जीवों का कलरव जो दिन भर, सुनने में मेरे आवे,
तेरा ही गुणगान जान मन, प्रभु चित्त हो अति सुख पावे।

मेरे आस-पास जो भी आवाज निकलेगी, तब भी मैं यही सोचूँगा कि तेरा ही गुणगान चल रहा है। यह जानकर आनन्दित रहूँगा और प्रतिपल निज इन्द्रिय समूह से, मेरे छोटे-छोटे अङ्गों से जो भी काम करूँगा, मैं रसोई बनाऊँगा तो तेरी ही सेवा करूँगा। सफाई करूँगा, तब भी तेरी ही सेवा करूँगा। मैं दुकानदार हूँ, हर ग्राहक में तेरा ही रूप देख लूँगा और उसकी सेवा करता रहूँगा। मेरा व्यापार भी चलेगा साथ ही साथ सेवा भी चलेगी, मेरी जुबान मीठी हो जाएगी, मेरे मन का क्रोध नष्ट हो जाएगा, मेरी कामनाएँ धीरे-धीरे कम होती चली जाएगी, मेरा रोग नष्ट हो जाएगा और तुझ में ही मैं सबको देखूँ। मेरा चलना, फिरना, उठना, बैठना, सोना तक तेरी सेवा बन जाए।

भगवान आदि शंकराचार्य ने जब मानस पूजा लिखी तो लिखा कि मेरी निद्रा भी तेरी समाधि बन जाए, मेरा चलना भी तेरी प्रदक्षिणा बन जाए, मेरे सारे शब्द भी तेरे स्तोत्र बन जाएं, मैं जो भी बात करूँ तेरा ही भजन बन जाए। मैं जो भी काम करूँ सारे के सारे तेरी आराधना बन जाएं।

इसी के साथ विवेचन सत्र के समापन के पश्चात प्रश्नोत्तर सत्र प्रारम्भ हुआ।

प्रश्नकर्ता : शशि गोयल दीदी

प्रश्न : आपके द्वारा अहिल्या के विषय में बताया गया है, मेरी जानकारी के अनुसार अहिल्या पत्थर की मूर्ति थी। भगवान श्रीराम ने पैर से छुआ तो नारी बन गई। यह क्या है?

उत्तर : आप जब वाल्मीकि रामायण पढ़ेंगे तो उसमें विस्तार से विवरण है कि घटना क्या घटी। अहिल्या पत्थर जैसी हो गई थी। वह पत्थर नहीं थी। भगवान राम के जीवन में आपको एक भी चमत्कार नहीं दिखेंगे। भगवान श्रीराम मानव देह में है, मानव देह की मर्यादा में रहकर लीलाएँ चलती हैं। अतः जो रामलीला है, वह मर्यादा की लीला है इसीलिए तो मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहा गया है। एक भी चमत्कार नहीं किया है जो मनुष्य देह में रहकर किया जा सकता है, वही किया है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार भगवान ने चरण नहीं लगाए हैं, भगवान ने अहिल्या को प्रणाम किया है। इन्द्र गौतम ऋषि का रूप लेकर अहिल्या के पास गए और उन्होंने गलत काम किए तो गौतम ऋषि ने देखा कि ऐसा कुछ हो रहा है।अहिल्या का दोष कुछ भी नहीं था तो गौतम ऋषि ने भला बुरा कह कर आश्रम त्याग दिया और अहिल्या उस दिन से वहाँ पर अपमानित भाव से बैठी हुई हैं। बड़ी पीड़ित हैं, न किसी से बात कर रही हैं, वह तो पत्थरवत है। भगवान श्रीराम ने वहाँ जाकर उनको प्रणाम किया है, क्योंकि वह उम्र में बड़ी हैं, साध्वी हैं। भगवान छोटे हैं, विश्वामित्र जी के साथ गए हैं। कुमार की अवस्था में है। हमें ध्यान रखना है कि अहिल्या का जो पुनश्च जीवन किया है, उसको अवसाद से निकाला है, यह कार्य भगवान ने अपनी युवावस्था में किया है।

प्रश्नकर्ता : जयश्री दीदी

प्रश्न : जैसा कि आपने बताया पहली रोटी किसकी है, हमें तो पता है कि पहली रोटी गाय को दी जाती है, आप पुनः बतायें?

उत्तर : जब रसोई बनती है तो पहले भगवान को भोग लगाया जाता है और पहली रोटी गाय को दी जाती है।

इसी के साथ प्रभु प्रार्थना के सङ्ग विवेचन सत्र का समापन हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||

||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||